Volume 3; Issue 2
April to Jun 2026

E-ISSN: 3048-6742

Sanskriti-Samvahika

संस्कृति-संवाहिका

Peer Reviewed Indexed Refereed Journal

Quarterly Journal

Sanskriti-Samvahika संस्कृति-संवाहिका
E-ISSN: 3048-6742
https://sanskritisamvahika.in
Volume 3; Issue 2; April to Jun, 2026; Page No. 9-14
Peer Reviewed, Indexed and Refereed Journal

मृच्छकटिक में निरूपित चारुदत्त का आदर्श

दीनबन्धु कुमार

शोधच्छात्र

संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं प्राच्यभाषा विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

महाकवि शूद्रक की एकमात्र कृति मृच्छकटिक है, जिसमें उन्होंने राजा, देवत्वादि पात्रों को छोड़कर मध्यम पात्र के रूप में एक गरीब ब्राह्मण को अपना नायक चुना है। इस ग्रन्थ के नायक चारुदत्त जन्मजात ब्राह्मण युवक है, जो धीरप्रशान्त कोटि का नायक है तथा वह नायक के सभी गुणों से युक्त हैं,जो प्रस्तावना में सूत्रधार के कथन से स्पष्ट होता है -

अवन्तिपुर्य्यां द्विजसार्थवाहो युवा दरिद्र: किल चारुदत्त:।[1]

सङ्केत शब्द - मृच्छकटिक, चारुदत्त और आदर्श।

चारुदत्त ने भी स्वयं को दशम अङ्क में ब्राह्मण बताया है तथा पुत्र को अपना यज्ञोपवीत दाय के रूप में देते हुए कहते हैं –

अमौक्तिकमसौवर्णं ब्राह्मणानां विभूषणम् ।

देवतानां पितृणाञ्च भागो येन प्रदीयते।।[2]

किन्तु वंश-परम्परा तथा कर्म से वह वैश्य है, जिसके कारण उन्हें अपने पूर्वज से बहुत सारा धन प्राप्त हुआ, अपार धन होने के बावजूद भी वह निर्धन हो जाता है, परन्तु उनके निर्धन होने के पीछे का कारण भोग- विलासिता नहीं

बल्कि अत्यन्त उदारता तथा दानशीलता की प्रवृत्ति है, यहीं कारण है कि दरिद्र हो जाने के पश्चात् भी समाज में अपनी उदार गुणों के कारण सदा आदर का पात्र बने रहते हैं, जो विट के कथन से स्पष्ट होता है-

दिनानां कल्पवृक्ष: स्वगुणफलनत: सज्जनानां कुटुम्बी

आदर्श: शिक्षितानां सुचरितनिकष: शीलवेलासमुद्र:।

सत्कर्त्ता नावमन्ता पुरुषगुणनिधिर्दक्षिणोदारसत्त्वो

ह्येक: श्लाघ्य: स जीवत्यधिकगुणतया चोच्छवसन्तीवचान्ये ।।[3]

उनका व्यक्तित्व देखने में अत्यन्त आकर्षक एवं मनोहर है, संवाहक वसन्तसेना को चारुदत्त का परिचय देते हुए द्वितीय अङ्क में उन्हें प्रियदर्शन कहता है तथा आर्यक भी सातवें अङ्क में उसके बाह्य व्यक्तित्त्व का प्रशंसा करते हुए कहते हैं -**न केवलं श्रुतिरमणीय:, दृष्टिरमणीयोऽपि।**[4]

वह अपने नगरवासियों में अत्यन्त लोकप्रिय तथा उच्चकोटि के प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति है, यहीं कारण है कि न्यायाधीश से लेकर चाण्डाल पर्यन्त सभी उनसे अगाध स्नेह करते हैं और उनका सहज ही सम्मान करते हैं। वह स्वयं भी कनिष्ठ से स्नेह तथा ज्येष्ठ का सम्मान करते हैं, उनके सम्मानित होने की बात द्वितीय अङ्क में वसन्तसेना से संवाहक कहते हैं -

आर्ये ! क इदानीं तस्य भूतलमृगाङ्कस्य नाम न जानाति। स खलु श्रेष्ठिचत्वरे प्रतिवसति,

श्लाघनीयनामधेन आर्यचारुदत्तो नाम।[5]

वह प्रकृति से ही उदार और दयालु प्रवृत्ति के हैं, जब भी कोई प्रशंसनीय कार्य करता है अथवा शुभ समाचार सुनाता है, तो वह उन्हें कुछ ना कुछ पुरस्कार के रूप में अवश्य देना चाहता है। संवाहक द्वितीय अङ्क में उनके उदारता, दयालुतादि गुणों की प्रशंसा करते हुए कहते हैं -

दत्त्वा न कीर्त्तयति, अपकृतं विस्मरति। किं बहुधा उक्तेन, दक्षिणतया परकीयमेव आत्मानमवगच्छति,

शरणागतवत्सलश्च।[6]

वह पुरस्कार रूप में कर्णपूरक को अपना दुशाला तक दे देता है। शर्विलक के द्वारा स्वर्ण-भाण्ड के चुरा लेने पर यह सोचकर दुखी नहीं होता कि हमारे घर में चोरी हो गया, बल्कि वह प्रसन्न होते हैं कि चोर हमारे घर से खाली हाथ नहीं गया- **यदसौ कृतार्थो गत:।**[7]

वह गरीबी और मृत्यु में मृत्यु को श्रेष्ठ बताते हुए कहते हैं-

दारिद्र्यान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्र्यम्।

अल्पक्लेशं मरणं दारिद्र्यमनन्तकं दु:खम्।।[8]

गरीबी मरण से भी बढ़कर है, यह जानते हुए भी उन्होंने अपना सारा धन दान कर दिए और इस बात की चिन्ता करते हैं कि गरीब समझकर अतिथिगण अब हमारे द्वार पर नहीं आयेंगे-

एतत्तु मां दहति यत् गृहमस्मदीयं क्षीणार्थमित्यतिथय: परिवर्जयन्ति।

संभुष्कसान्द्रमद्वलेखमिव: भ्रमन्त: कालात्यये मधुकरा: करिण: कपोलम्।।[9]

चारुदत्त सारी विपत्तियों का जड़ दरिद्रता को ही मानते हुए कहते हैं-

दारिद्र्याद्ध्रियमेति ह्रीपरिगत: प्रभ्रश्यते तेजसो निस्तेजा: परिभूयते, परिभवान्निर्वेदमापद्यते।

निर्विण्ण: शुचमेति शोकपिहितो बुद्ध्या परित्यज्यते निर्बुद्धि: क्षयमेत्यहो निधनता सर्वापदामास्पदम्।।[10]

चारुदत्त में प्रतिशोध लेने का भाव बिल्कुल नहीं है, वह शरण में आये शत्रु को भी अभयदान देते हैं- **अभयं शरणागतस्य।**[11] वह भयमुक्त स्वभाव का है, क्योंकि विदूषक से जब ज्ञात होता है कि शकार जीवनपर्यन्त शत्रुता की धमकी दे गया है, तो वह उपेक्षा से इतना ही कहते हैं- **अज्ञोऽसौ।**[12]

वह मृत्यु दण्ड से भी दु:खी नहीं है केवल अपनी प्रतिष्ठा के भङ्ग होने का दु:ख है-

न भीतो मरणादस्मि केवलं दूषितं यश:।

विशुद्धस्य हि मे मृत्यु: पुत्रजन्मसमो भवेत्।।[13]

यह उनके स्वच्छ-चरित्र का ही परिणाम है कि धरोहर के रूप में वसन्तसेना के स्वर्ण-भाण्ड के चोरी हो जाने पर अनेक आशङ्कायें व्यक्त करते हुए मूर्छित हो जाता है-

क: श्रद्धास्यति भूतार्थं सर्वो मां तलयिष्यति।

शङ्कनीया हि लोकेऽस्मिन् निष्प्रतापा दरिद्रता।।[14]

वह अपने चरित्र को कलुषित होने से रोकने के लिए भीख माङ्ग कर भी वसन्तसेना का धरोहर लौटाने के लिए आतुर रहते हैं-

भैक्ष्येणाप्यर्जयिष्यामि पुनर्न्यासप्रतिक्रियाम्।

अनृतं नाभिधास्यामि चारित्रभ्रंशकारणम्।।[15]

चारुदत्त का चरित्र नैतिकता का चट्टान है, फिर भी अपनी कीर्ति को बचाने के लिए तथा वसन्तसेना को रत्नावली (आभूषण) देने के लिए झूठ का आश्रय लेते हैं। वह अपने भार्या (धूता) और पुत्र (रोहसेन) से उतना ही प्रेम करते हैं, जितना की वसन्तसेना से। विलासी स्वभाव के होते हुए भी परस्त्री पर दृष्टि डालना अनैतिक मानते हैं- **न युक्तं परकलत्रदर्शनम्।**[16]

चारुदत्त जिस स्त्री से रदनिका समझकर व्यवहार कर रहा था, जब यह ज्ञात होता है कि वह रदनिका नहीं है, तो वह खिन्न-स्वर से कहता है- **इयं सा रदनिका। इयमपरा का ? अविज्ञातावसवतेन दूषिता मम वासना।**[17]

चारुदत्त को धर्म में पूर्ण-आस्था है, विदूषक द्वारा सन्ध्यावन्दनादि में अनास्था व्यक्त करने पर, वह चारुदत्त को ईश्वरपूजा का महत्व समझाते हुए कहता है-**वयस्य ! मा मैवम्। गृहस्थस्य निलोऽयं विधि:**।

तपसा मनसा वाग्भि: पूजिता बलिकर्मभि:।

तुष्यन्ति शमिनां नित्यं देवता: किं विचारितै:।।[18]

वह किसी का उपकार करके उस बात को अपने मुख से दुहराता नहीं है, निद्रा के सम्बन्ध में उनका सूक्ष्म आलङ्कारिक विचार प्रशंसनीय है-

इयं हि निद्रा नयनावलम्बिनी ललाटदेशादुपसर्पती वमाम्।

अदृश्यरूपा चपला जरेव या मनुष्यसत्त्वं परिभूय वर्द्धते।।[19]

शकार की धूर्तता के कारण मिथ्याभियोग से प्राण दण्ड पाकर भी चारुदत्त शरणागत शकार को मृत्यु से मुक्ति दिलाने का जो विचार व्यक्त करते हैं, वह अतुलनीय है कि शरणागत अपराधी को शस्त्र से ना मारकर उपकार के द्वारा मारना चाहिए-

शत्रु: कृतापराध: शरणमुपेत्य पादयो: पतित:।

शस्त्रेण न हन्तव्य: उपकारहतस्तु कर्तव्य:।।[20]

उपसंहार

मृच्छकटिक में चारुदत्त का आदर्श नैतिक पराकाष्ठा की वह कठोर चट्टान है, जो अभेद है। जिसे भेद पाना मन, कर्म और वचन तीनों से युक्त महान् दिव्यात्मा के ही सामर्थ्य की बात है, किन्तु वह जीवन और दान के बीच सामञ्जस्य

स्थापित करने में विफल रहते हैं। अतः अतिशय दानशीलता को छोड़कर उनके जीवन के समग्र- भाग में नैतिकता की जो सुगन्ध है, वह अवश्य ही हमारे आदर्श जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

पाद टिप्पणी

1. जगदीशचन्द्र मिश, मृच्छकटिक, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2021। श्लोक संख्या-1/6, पृष्ठ संख्या-9
2. वही, श्लोक संख्या-10/18, पृष्ठ संख्या-483
3. वही, श्लोक संख्या-1/48, पृष्ठ संख्या-69
4. वही, पृष्ठ संख्या-331
5. वही, पृष्ठ संख्या-124
6. वही, पृष्ठ संख्या-122
7. वही, पृष्ठ संख्या-169
8. वही, श्लोक संख्या-1/11 , पृष्ठ संख्या-26
9. वही, श्लोक संख्या-1/12 , पृष्ठ संख्या-27
10. वही, श्लोक संख्या-1/14 पृष्ठ संख्या-29
11. वही, पृष्ठ संख्या-583
12. वही, पृष्ठ संख्या-82
13. वही, श्लोक संख्या-10/27, पृष्ठ संख्या-491
14. वही, श्लोक संख्या-3/24, पृष्ठ संख्या-170
15. वही, श्लोक संख्या-3/26, पृष्ठ संख्या-171
16. वही, पृष्ठ संख्या-80
17. वही, पृष्ठ संख्या-79
18. वही, श्लोक संख्या-1/16, पृष्ठ संख्या-31
19. वही, श्लोक संख्या-3/8, पृष्ठ संख्या-148
20. वही, श्लोक संख्या-10/55, पृष्ठ संख्या-533

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

१. प्रीति प्रभा गोयल, संस्कृत साहित्य का इतिहास (लौकिक खंड) , राजस्थानी ग्रन्थागार , जोधपुर , 1998

२. सुषमा, मृच्छकटिक : एक आलोचनात्मक अध्ययन , इण्डोविजन प्राइवेट लिमिटेड , गाजियाबाद , 1985

३. कपिलदेव द्विवेदी, संस्कृत साहित्य का इतिहास, रामनारायणलाल विजय कुमार 2, कटरा रोड, इलाहाबाद, 2004

४. उमाशङ्कर शर्मा 'ऋषि' संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी, 2019

५. बलदेव उपाध्याय, संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा मंदिर, काशी, 1948